Dr. Vandana Suman
Associate Professor
Dept. of Philosophy
H.D. Jain College, Ara
M.A. Semester - I Philosophy CC-01
Indian Epistemology & Logic

"Hetvabhasa" (हेत्वाभास)

अनुमान में जो दोष होते हैं, इनके एकमात्र कारण गलत हेतु या हेत्वाभास ही हैं। इसलिए अनुमान के दोषों को हेत्वाभास के नाम से पुकारते हैं। नैयायिकों के अनुसार हेत्वाभास मुख्यतः पाँच प्रकार के होते हैं—

1. सव्यभिचार या अनैकान्तिक
2. विरुद्ध
3. सत्प्रतिपक्ष या प्रकरणसम
4. असिद्ध या साध्यसम
5. बाधित

1. सव्यभिचार— अनुमान के सही होने के लिए आवश्यक है कि हेतु का साध्य के साथ अव्यभिचारी सम्बन्ध हो। अर्थात् हेतु का साध्य के अलावा किसी अन्य से सम्बन्ध न हो वह एकमात्र साध्य से ही सम्बन्धित हो। किन्तु यदि भिन्न किसी अन्य वस्तु के साथ [illegible] तो उसे सव्यभिचारी हेतु कहते हैं और इसके चलते जो दोष होता है उसे सव्यभिचार दोष कहते हैं। चूँकि इसमें हेतु एकमात्र साध्य से ही सम्बन्धित न होकर अन्य से भी सम्बन्धित रहता है, इसलिए इसे अनैकान्तिक (जो केवल एक से ही सम्बन्धित नहीं) दोष भी कहते हैं जैसे, सभी ज्ञात पदार्थ अग्नियुक्त हैं, पहाड़ ज्ञात पदार्थ है; इसलिए पहाड़ अग्नियुक्त है। यहाँ हम देखते हैं कि 'ज्ञात पदार्थ' (हेतु) केवल 'अग्नियुक्त पदार्थ' (साध्य) से ही सम्बन्धित नहीं है, बल्कि इसके अतिरिक्त अग्नि रहित जैसे (कुआँ, तालाब आदि) [illegible]

भी सम्बन्धित हैं। अतः इसमें अनैकान्तिक या सव्यभिचार दोष है। इसप्रकार के हेतु द्वारा पहाड़ के अग्निमान होने और अग्नि रहित होने दोनों का अनुमान किया जा सकता है। या यों कहें कि इसके द्वारा निश्चित रूप से कुछ भी सिद्ध नहीं किया जा सकता।

सव्यभिचार - दोष तीन प्रकार के होते हैं — (क) साधारण (ख) असाधारण और (ग) अनुपसंहारी

(क) साधारण - साधारण सव्यभिचार में हेतु अति व्याप्त होता है। यह केवल साध्य की व्याप्ति में ही वर्तमान नहीं रहता, बल्कि जहाँ साध्य का अभाव है वहाँ भी पाया जाता है। ऊपर के उदाहरण में ज्ञात पदार्थ हेतु का सम्बन्ध केवल अग्नियुक्त पदार्थों (साध्य) से ही नहीं है बल्कि अग्नि रहित पदार्थों से भी है। जिसप्रकार रसोई घर (साध्य) से ही नहीं है बल्कि अग्नि रहित पदार्थों से भी है। जिसप्रकार रसोई घर (जहाँ अग्नि की उपस्थिति है) ज्ञात है, उसी प्रकार तालाब जहाँ अग्नि का अभाव है) भी ज्ञात है। अतः यह साधारण सव्यभिचार का उदाहरण है। जैसे:

सभी जनेऊ पहनने वाले ब्राह्मण हैं।
देवदत्त जनेऊ पहनता है।
∴ देवदत्त ब्राह्मण है।

इस उदाहरण में जनेऊ पहनना (हेतु) केवल ब्राह्मण (साध्य)

में ही नहीं पाया जाता बल्कि ब्राह्मणों के अलावा दूसरे लोग भी अनेक पहनते हैं। अतः यहाँ साधारण सव्यभिचार दोष है।

(ख) असाधारण — असाधारण सव्यभिचार में हेतु केवल पक्ष में ही अव्याप्त होता है। यह न तो साध्य में रहता है। पक्ष के अतिरिक्त अनुपस्थित भी रहता है, न साध्य की। शब्द नित्य है क्योंकि वह सुनाई पड़ता है। यहाँ हम देखते हैं कि 'सुनाई पड़ना' हेतु एकमात्र शब्द (पक्ष) में ही पाया जाता है। न इसे हम आत्मा आदि नित्य वस्तुओं (साध्य) में देखते सकते हैं और न घट आदि अनित्य वस्तुओं (साध्य) की अनुपस्थिति में। अतः इससे कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं प्राप्त किया जा सकता।

(ग) अनुपसंहारी - अनुपसंहारी सव्यभिचार का पक्ष ही ऐसा होता है कि वह सबको अपने अन्दर समेट लेता है। पक्ष के अतिरिक्त कोई उदाहरण ही नहीं बचता जिसमें हेतु के साथ भावात्मक (अन्वय) या निषेधात्मक (व्यतिरेक) सम्बन्ध दिखलाया जा सके। अतः किसी भी तरह व्याप्ति दिखलायी ही नहीं जा सकती और ऐसी हालत में अनुमान की सत्यता और असत्यता का निर्णय नहीं किया जा सकता अर्थात् ऐसे अनुमान से

कोई भी उपसंहार नहीं निकाला जा सकता। इसीलिए इस दोष को अनुपसंहारी (Inconclusive) कहते हैं, जैसे — सभी पदार्थ अनित्य हैं, क्योंकि वे ज्ञेय हैं।

इस उदाहरण में सभी पदार्थ पक्ष हैं। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य है नहीं जाता जिसके साथ ज्ञेयत्व (हेतु) का भावात्मक या निषेधात्मक सम्बन्ध दिखलाया जा सके। और हम जानते हैं कि जब तक भावात्मक (अन्वय) या निषेधात्मक (व्यतिरेक) दोनों में से किसी भी दृष्टान्त द्वारा हेतु का साध्य के साथ सम्बन्ध (व्याप्ति) नहीं दिखलाया जाय तब तक अनुमान नहीं हो सकता। अतः अनुपसंहारी अनुमान द्वारा हम किसी भी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकते।

(2) विरुद्ध — विरुद्ध हेत्वाभास उसे कहते हैं जिसमें हेतु साध्य को सिद्ध न कर उसके विरोधी को ही सिद्ध कर देता है।

इसका कारण है कि इन अनुमानों में हेतु साध्य से सम्बन्धित होकर उसके विरोधी से ही सम्बन्धित रहता है। वह साध्य की उपस्थिति में वर्तमान न रहकर उसके अभाव में ही वर्तमान रहता है। जैसे — शब्द नित्य है, क्योंकि यह उत्पन्न होता है।

लोमता
हवा भारी है,
क्योंकि, वह रिक्त (खाली) है।
होना, हेतु है। पहले उदाहरण में उत्पन्न (साध्य) साबित न होकर शब्द की नित्यता अनित्यता (साध्य विरोधी) ही साबित होती है क्योंकि उत्पन्न होनेवाले पदार्थ विनाशी होते हैं, अविनाशी या नित्य नहीं होते। इसीतरह दूसरे उदाहरण में (खालीपन) (रिक्तता) हेतु है। पर इससे हवा का भारी होना सिद्ध नहीं होता, बल्कि इसका उल्टा यानी हवा का हल्का होना ही सिद्ध होता है, क्योंकि खालीपन या रिक्तता (हेतु) का सम्बन्ध हल्के पदार्थ (साध्य विरोधी) से है न कि भारी पदार्थ (साध्य) से।

इसप्रकार सव्यभिचार और विरुद्ध में हम यह भेद पाते हैं कि सव्यभिचार साध्य का निश्चित रूप से केवल सिद्ध नहीं कर पाता, किन्तु विरुद्ध साध्य को निश्चित रूप से असिद्ध कर देता है या यों कहें कि उसके विरोधी को सिद्ध कर देता है।

(3.) सत्प्रतिपक्ष — सत्प्रतिपक्ष (सत = वर्तमान, प्रतिपक्ष = विरोधी) हेत्वाभास उसे कहते हैं जिसमें एक हेतु के प्रतिपक्ष (विरोधी) के रूप में दूसरा हेतु भी वर्तमान रहता है, जो पहले हेतु द्वारा प्रमाणित

साध्य को खण्डित कर देता है। अर्थात सत्प्रतिपक्ष हेत्वाभास में एक दूसरा हेतु होता है, जो साध्य का अभाव सिद्ध करता है। जैसे — पहले हेतु का उदाहरण — शब्द नित्य है, क्योंकि यह सुनाई पड़ता है। दूसरे हेतु का उदाहरण — शब्द अनित्य है, क्योंकि यह एक कार्य है। यहाँ हम देखते हैं कि पहले हेतु (सुनाई पड़ना) द्वारा शब्द की नित्यता सिद्ध की गयी है और दूसरे हेतु (कार्य) के द्वारा इसका खण्डन हो जाता है। दूसरा हेतु साध्य-विरोधी (शब्द की अनित्यता) को सिद्ध कर देता है। इन दो तुल्य बलवान हेतुओं के कारण हमारी समस्या का निश्चित हल नहीं हो पाता। जो प्रकरण (विवाद) पहले हमारे सामने था, वह उसी रूप में बना रह जाता है। उसकी निश्चित सिद्धि या असिद्धि नहीं हो पाती। इसलिए इसे 'प्रकरणसम' हेत्वाभास भी कहते हैं।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि हम विवादास्पद विषय (साध्य) को ही सिद्ध या असिद्ध मान कर इसे साधन के रूप में विवादास्पद विषय (साध्य या प्रकरण) के निर्णय के लिए प्रयुक्त करते हैं। वैसी परिस्थिति में भी जो दोष उत्पन्न होते हैं उन्हें भी प्रकरणसम या सत्प्रतिपक्ष दोष

ही कहते हैं क्योंकि यहाँ भी दो तुल्य बलवान
हेतु (साधन) के कारण साध्य सिद्ध नहीं हो
पाता और प्रकरण (विवाद) ज्यों का त्यों
बना रह जाता है। जैसे कोई यह अनुमान करता
है कि — देवदत्त ब्राह्मण है।
क्योंकि उसमें अब्राह्मणत्व नहीं
दीख पड़ता।
तो कोई दूसरा इसका खण्डन इस प्रकार
कर सकता है कि —
देवदत्त अब्राह्मण है
क्योंकि उसमें ब्राह्मणत्व नहीं दीख पड़ता।
यहाँ हम देखते हैं कि देवदत्त
का ब्राह्मण होना या अब्राह्मण होना (ब्राह्मणत्व
या अब्राह्मणत्व) विवाद का विषय है। किन्तु
प्रथम और द्वितीय अनुमान के हेतु उसे क्रमशः
सिद्ध या असिद्ध मानकर साध्य का निर्णय
करते हैं। अतः ऐसे हेतुओं के कारण निष्कर्ष
परस्पर विरोधी हो जाते हैं और साध्य
का निश्चित निर्णय नहीं हो पाता।
विरुद्ध और सत्प्रतिपक्ष में
भेद यह है कि विरुद्ध हेत्वाभास में उसी
एक हेतु से साध्य का विरोधी साबित
हो जाता है किन्तु सत्प्रतिपक्ष में इसके
लिए एक अन्य हेतु का सहारा लेना
पड़ता है।

(4.) असिद्ध — हम मानते
हैं कि हेतु की आवश्यकता साध्य को
सिद्ध करने के लिए ही होती है किन्तु
यदि हेतु स्वयं असिद्ध हो तो वह

साध्य को क्या सिद्ध करेगा? कहा भी गया है —
(स्वयं असिद्धः कथं परान् साधयति।) जो
स्वयं अन्धा है, वह दूसरे को क्या राह
दिखला सकेगा। अतः असिद्ध हेत्वाभास
उसे कहते हैं जिसका हेतु स्वयं साध्य के
ही समान असिद्ध रहता है, जिससे वह
साध्य की सिद्धि नहीं कर पाता। चूँकि इस
हेत्वाभास में हेतु साध्य के ही समान असिद्ध
रहता है, इसलिए इसे साध्यसम (साध्य
के समान) भी कहते हैं। हेतु तीन प्रकार से
असिद्ध होता है — इसलिए असिद्ध हेत्वाभास
के तीन भेद होते हैं:
(क) आश्रयासिद्ध (ख) स्वरूपासिद्ध और
(ग) व्याप्यत्वासिद्ध।

(क) आश्रयासिद्ध — जब हेतु
अपने आश्रय (आधार) के असिद्ध होने
से असिद्ध होता है, तो उसे आश्रयासिद्ध
हेत्वाभास कहते हैं, जैसे — आकाश
कमल सुगन्धित है, क्योंकि इसमें
कमलत्व है।

अथवा

स्वर्णकमल चमकीला है
क्योंकि इसमें स्वर्णत्व है।

पहले उदाहरण में कमलत्व (हेतु)
का आश्रय (आकाश-कमल) है। पर
आकाश-कमल का अस्तित्व तो
स्वतः ही असिद्ध है। आकाश में
कमल का होना सम्भव नहीं है।
अतः यह हेतु (कमलत्व)

निराधार होने के कारण असिद्ध हो जाता है, और जब हेतु ही असिद्ध हो गया तो फिर साध्य कैसे सिद्ध होगा? इसी प्रकार स्वर्णपर्वत भी कल्पनामात्र है। इसका अस्तित्व असिद्ध है। अतः इसमें रहने वाला स्वर्णत्व (हेतु) भी असिद्ध हो जाता है। और स्पष्ट है कि हेतु के असिद्ध होने पर साध्य की सिद्धि नहीं हो सकती।

(ख) स्वरूप सिद्ध — इसमें हेतु अपने स्वरूप के ही कारण असिद्ध हो जाता है। यहाँ हेतु का स्वरूप ही ऐसा होता है कि वह पक्ष में नहीं पाया जाता। जैसे शब्द नित्य है क्योंकि यह देखा जा सकता है। यह देखा जा सकता (हेतु) शब्द (पक्ष) के सम्बन्ध में गलत या असिद्ध है क्योंकि शब्द देखा नहीं जा सकता। इस प्रकार शब्द की नित्यता सिद्ध करने के लिए जो हेतु दिया गया है, वह अपने स्वरूप के ही कारण असिद्ध है। अतः इस असिद्ध हेतु से साध्य की सिद्धि नहीं हो सकती। इसी प्रकार दूसरा उदाहरण यह हो सकता है — अश्व घोड़ा भी पक्षी है (क्योंकि वह) आकाश में उड़ सकता है। स्पष्ट है कि उक्त उदाहरण का हेतु (आकाश में उड़ना) पक्ष (घोड़े) में नहीं पाया जाता है। अतः

असिद्ध हेतु से साध्य की सिद्धि नहीं हो सकती ।

आश्रयासिद्ध और स्वरूपासिद्ध में भेद यह है कि आश्रयासिद्ध में आश्रय या पक्ष का अस्तित्व ही असिद्ध रहता है। पर स्वरूपासिद्ध में पक्ष का अस्तित्व तो सिद्ध रहता है, किन्तु हेतु अपने स्वरूप के ही कारण पक्ष के सम्बन्ध में असिद्ध हो जाता है।

(ग) व्याप्यत्वासिद्ध —

व्याप्यत्वासिद्ध में हेतु का साध्य के साथ नियत (अनौपाधिक) सम्बन्ध या व्याप्ति सिद्ध नहीं रहती। और हम जानते हैं कि व्याप्ति के बिना अनुमान की सत्यता सिद्ध नहीं की जा सकती। जैसे — पहाड़ में धुआँ है। क्योंकि इसमें आग है। इसमें हम आग से धुआँ के अस्तित्व का अनुमान करते हैं। पर ऐसा करने में गलती की सम्भावना है; क्योंकि हम जानते हैं कि आग के साथ धुएँ का सम्बन्ध होना एक शर्त या

उपाधि पर निर्भर करता है। वह उपाधि है ईंधन का गीला हुआ रहना (आर्द्रेन्धन संयोग)। अतः आग के साथ धुआँ का अनौपाधिक सम्बन्ध या व्याप्ति सम्बन्ध सिद्ध नहीं है। इसलिए ऐसे हेत्वाभास को व्याप्यत्वासिद्ध कहते हैं। एक अपर उदाहरण लीजिए — देवदत्त पण्डित है;

क्योंकि वह काशी में रहता है। यहाँ भी काशी में रहने और पण्डित होने में कोई व्याप्ति सम्बन्ध नहीं है। अतः काशी में रहने से ही देवदत्त का पण्डित होना सिद्ध नहीं हो सकता। इसकी सिद्धि के लिए कोई दूसरा (अन्यथा) तरीका अपनाना आवश्यक है। इसलिए इसे अन्यथासिद्ध भी कहते हैं।

(5.) बाधित — बाधित उस हेत्वाभास को कहते हैं जिसमें हेतु के द्वारा जो सिद्ध किया जाता है, वह दूसरे प्रमाण से निश्चित रूप से खण्डित (बाधित) हो जाता है। जैसे — आग ठंडी है। क्योंकि यह एक द्रव्य है। यहाँ 'द्रव्य होना' हेतु है जिसके आधार पर आग का ठंडापन सिद्ध किया जाता है। किन्तु आग के ठंडेपन का निश्चित रूप से खण्डन और स्पर्श-ज्ञान के द्वारा हो जाता है और इसका उल्टा यानी आग की गर्मी सिद्ध हो जाती है।

इसीप्रकार यदि कोई ऐसा अनुमान करें कि— मिरचाई मीठी है क्योंकि यह लाल है।

तो मिरचाई को तुरत उसकी जीभ पर रखकर उसे उसका स्वाद चखाया जा सकता है। इसप्रकार हेतु द्वारा जो अनुमान प्राप्त किया गया था उसका खण्डन प्रत्यक्ष नामक एक दूसरे प्रमाण द्वारा निश्चित रूप से हो जाती है।

सत्प्रतिपक्ष और बाधित में यह भेद है कि सत्प्रतिपक्ष में पहले अनुमान

का खण्डन दूसरे अनुमान से किया जाता है, किन्तु बाधित में पहले अनुमान का खण्डन अनुमान के अलावा किसी दूसरे प्रमाण से किया जाता है।

कुछ लोगों के अनुसार बाधित हेत्वाभास ही कालातीत के नाम से पुकारा जाता है। किन्तु इन दोनों हेत्वाभासों में कोई समानता नहीं दिखाई पड़ती। अतः इन दोनों को एक समझना उचित नहीं मालूम पड़ता। कालातीत प्राचीन न्याय का पाँचवाँ हेत्वाभास है और नव्य-न्याय में बाधित को ही हेत्वाभास की सूची में पाँचवाँ स्थान दिया गया है। सम्भवतः इसी कारण से कुछ लोगों ने दोनों को एक समझ लिया है। किन्तु वात्स्यायन ने अपने भाष्य में कालातीत हेत्वाभास का जो उदाहरण दिया है, उससे उसका बाधित से अन्तर स्पष्ट हो जाता है। वात्स्यायन ने कालातीत हेत्वाभास का निम्नलिखित उदाहरण दिया है—

शब्द नित्य है

क्योंकि इसकी अभिव्यक्ति संयोगजन्य है, जैसे रूप की। मीमांसकों ने शब्द की नित्यता सिद्ध करने के लिए इस प्रकार की युक्ति का सहारा लिया है। उनका यह कहना है कि रूप के ही समान 'शब्द' भी नित्य है। जिस प्रकार घट आदि वस्तुओं के रूप की अभिव्यक्ति घट और प्रकाश के संयोग द्वारा

होती है, यद्यपि वह रूप उस संयोग के पहले और बाद भी विद्यमान रहता है; ठीक इसी प्रकार शब्द की भी अभिव्यक्ति नगाड़े और डंडे के संयोग से होती है। पर यह 'शब्द' रूप की ही भाँति इस संयोग के पहले और बाद भी विद्यमान रहता है।

वात्स्यायन ने उपर्युक्त अनुमान का दोष इस प्रकार दिखलाया है — इस उदाहरण में 'संयोगजन्य अभिव्यक्ति' को हेतु माना गया है, किन्तु इस हेतु में काल के व्यतिक्रम होने का दोष है; क्योंकि जिस प्रकार घट और प्रकाश के संयोग के साथ ही रूप का ज्ञान होता है, ठीक उसी प्रकार नगाड़े और डण्डे के संयोग के साथ ही शब्द का ज्ञान नहीं होता। किसी दूरस्थ व्यक्ति को नगाड़े और डण्डे के संयोग के कुछ बाद शब्द का ज्ञान होता है। इस प्रकार शब्द की अभिव्यक्ति संयोगजन्य (संयोग के साथ उत्पन्न) नहीं है, बल्कि संयोग का काल व्यतीत (अतीत) हो जाने पर शब्द की प्राप्ति होती है। अतः हम देखते हैं कि शब्द की नित्यता सिद्ध करने के लिए जो हेतु (संयोगजन्य अभिव्यक्ति) दिया गया है, वह दोषयुक्त है क्योंकि संयोग होने और शब्द की अभिव्यक्ति होने के बीच कुछ समय व्यतीत हो जाता है। ऐसी बात रूप के सम्बन्ध नहीं है। वहाँ प्रकाश से संयोग होने के साथ ही रूप की अभिव्यक्ति हो जाती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुमान का हेतु कुछ समय के व्यतीत (अतीत) होने के कारण ही दोषपूर्ण हो जाता है। अतः इस हेत्वाभास को कालातीत कहते हैं।